पुरुषार्थसिद्धि-उपाय चलता है। अमृतचन्द्राचार्य दिगम्बर मुनि आज से ९०० वर्ष पहले हुए। दो हजार वर्ष पहले कुन्दकुन्दाचार्य दिगम्बर मुनि हुए। उन्होंने समयसार आदि (ग्रन्थ) बनाये। उनकी टीका रचनेवाले अमृतचन्द्राचार्य ने यह ग्रन्थ बनाया है। यहाँ अमृतचन्द्राचार्य छठवीं गाथा में ऐसा कहते हैं कि पहले प्रश्न उत्पन्न हुआ है कि निश्चयनय है, वह यथार्थ है और व्यवहारनय है, वह अयथार्थ है। बाद में स्पष्टीकरण आयेगा, हों! निश्चय जो सत्य वस्तु है, निश्चय है, वह सत्य वस्तु को कहता है और व्यवहार है, वह असत्यार्थ, अभूतार्थ, अवस्तु को कहता है। अन्दर दृष्टान्त आयेगा।

निश्चय तो, आत्मा का शुद्ध चैतन्यस्वरूप है, वही कहता है। आत्मा शुद्ध चैतन्य आनन्द पूर्ण शुद्धस्वरूप है, वह आत्मा है - ऐसा निश्चयनय कहता है। यह दृष्टि करने से सम्यग्दर्शन होता है। समझ में आया? सम्यग्दर्शन अर्थात् धर्म की शुरुआत की पहली सीढ़ी, पहला सोपान। निश्चयनय ऐसा कहता है कि यह तो चैतन्यस्वरूप भगवान आत्मा पूर्ण शुद्धस्वरूप है, वह आत्मा है। निश्चय यह कहता है, वह यथार्थ कहता है, भूतार्थ कहता है, यथार्थ / सत्य कहता है, क्योंकि ऐसे चैतन्य शुद्धस्वरूप आत्मा की अन्तर्दृष्टि करने से, व्यवहार का लक्ष्य छोड़ने से, शुद्ध स्वभाव परिपूर्ण आत्मा का आश्रय करने से

www.vitragvani.com

सत्य ऐसा सम्यग्दर्शन प्रगट होता है। शोभालालजी! तो निश्चय सत्य को कहता है; व्यवहार उपचार को-असत्यार्थ को कहता है।

कहते हैं कि यदि निश्चय सत्य को कहता है और व्यवहार असत्य को कहता है तो ऐसे व्यवहार का उपदेश करने की आवश्यकता क्या है? व्यवहार ऐसा कहता है कि आत्मा-देव आत्मा, मनुष्य आत्मा, क्रोधी आत्मा, रागी आत्मा — ऐसा व्यवहारनय कहता है; तो शिष्य ने प्रश्न किया कि यदि निश्चय यथार्थ कहता है और व्यवहार अवास्तविक कहता है तो व्यवहार कहने की आवश्यकता क्या है? समझ में आया? एक प्रश्न यह है।

दूसरा, जो व्यवहार को ही निश्चय मान लेता है, वह उपदेश के योग्य ही नहीं है। समझ में आया? व्यवहार का उपदेश चलता है निश्चय को बतलाने के लिये; परन्तु जो व्यवहार को ही मान ले; तुमने व्यवहार से कहा तो वह भी सत्य है - ऐसा माननेवाला सत्य उपदेश सुनने के योग्य नहीं है। समझ में आया? यह दो बातें छठवीं गाथा में कहेंगे। यह उपोद्घात किया।

अबुधस्य बोधनार्थं मुनीश्वराः देशयन्त्यभूतार्थम्।
व्यवहारमेव केवलमवैति यस्तस्य देशना नास्ति।।६।।

मुनिश्वर, सन्त, मुनि दिगम्बर सन्त **'अबुधस्य बोधनार्थं' 'देशयन्त्यभूतार्थम्'** धर्मात्मा आचार्य, अज्ञानी जीव को ज्ञान प्रगट करने के लिये—अज्ञानी जीव को वस्तु का यथार्थ बोध नहीं है, इसलिए उसका अज्ञान मिटाने के लिये और उसका यथार्थ ज्ञान क्या है - यह समझाने के लिये **'अभूतार्थं' व्यवहारनय का उपदेश करते हैं....** अज्ञानी को सत्य का ज्ञान नहीं है तो असत्य अर्थात् भेद पाड़कर अथवा संयोग का लक्ष्य कराकर आत्मा को बतलाते हैं। बतलाना तो आत्मा है न? सार में सार तो आत्मा है। आत्मा का अनुभव, सम्यग्दर्शन, वही पहला धर्म है। इसके अतिरिक्त धर्म नहीं होता। आत्मा बतलाने में अज्ञानी पहले आत्मा, शरीर से, राग से, कर्म से भिन्न है — ऐसा कभी समझा नहीं तो व्यवहार से उसे समझाते हैं कि आत्मा, देव-आत्मा, मनुष्य-आत्मा, परन्तु वह देव-मनुष्य-आत्मा नहीं है। ऐसा (तो) व्यवहार से समझाते हैं। **अज्ञानी जीवों को ज्ञान उत्पन्न करने के लिये....** चैतन्य शुद्धस्वरूप बतलाने को देव-आत्मा, मनुष्य-आत्मा,

www.vitragvani.com

एकेन्द्रिय-आत्मा, पंचेन्द्रिय आत्मा — ऐसे व्यवहार से निश्चय चैतन्यस्वरूप को बताने में बीच में व्यवहार आता है, इसलिए बतलाते हैं। उसे अभूतार्थ व्यवहार से उपदेश करते हैं।

भावार्थ : क्योंकि अनादि अज्ञानी, **अनादि का अज्ञानी जीव व्यवहारनय के उपदेश बिना समझ नहीं सकता....** व्यवहार के उपदेश के बिना नहीं समझता। व्यवहार किये बिना नहीं समझता — ऐसा नहीं कहा। दोनों में अन्तर है। समझ में आया? अनादि अज्ञानी व्यवहारनय के उपदेश के बिना नहीं समझता; व्यवहार किये बिना नहीं समझता — ऐसा नहीं है। समझ में आया? क्या कहते हैं? बाद में अर्थ आयेगा, हों!

व्यवहारनय के उपदेश बिना समझ नहीं सकता, इसलिए आचार्य महाराज व्यवहारनय के द्वारा उसको समझाते हैं। अज्ञानी को, आत्मा क्या चीज है, वास्तविक पदार्थ क्या है? — यह अनादि से अज्ञानी समझा नहीं तो अज्ञानी को आचार्य, मुनि, सन्त व्यवहार से समझाते हैं। दृष्टान्त देते हैं। **जैसे किसी म्लेच्छ को....** कोई म्लेच्छ मुसलमान को **एक ब्राह्मण ने 'स्वस्ति' शब्द कहकर आशीर्वाद दिया,...** स्वस्ति-आशीर्वाद दिया। ब्राह्मण ने किसी म्लेच्छ को-मुसलमान को आशीर्वाद दिया — स्वस्ति - ऐसा कहकर **आशीर्वाद दिया, तो उसे उसके अर्थ का कुछ बोध नहीं हुआ...** यह क्या कहते हैं? यह 'स्वस्ति' क्या कहते हैं? मुसलमान स्वस्ति का अर्थ समझा नहीं, समझा नहीं (कि) यह क्या कहते हैं? 'स्वस्ति' क्या कहते हैं? **वह ब्राह्मण की तरफ ताकता रहा।** स्वस्ति कहनेवाले की ओर उसकी नजर रही। क्या कहते हैं यह? स्वस्ति हो, स्वस्ति हो—क्या कहते हैं?

वहाँ एक दुभाषिया... वहाँ दूसरा दोनों भाषाओं का जाननेवाला; म्लेच्छ की भाषा को और यथार्थ भाषा को (जाननेवाला)। **उससे म्लेच्छ भाषा में बोला कि यह ब्राह्मण कहता है कि भैया! 'तेरा कल्याण हो,'....** अच्छा! यह स्वस्ति में नहीं समझा। स्वस्ति! स्वस्ति का अर्थ है - तेरा स्वरूप है स्व। तेरा भला होओ। स्वस्ति शब्द में नहीं समझा। तेरा भला हो - ऐसा तुझे कहते हैं। **तब आनन्दित होकर....** तब सुननेवाला म्लेच्छ, स्वस्ति का अर्थ - भला हो — ऐसा समझकर आनन्दित हुआ। ओ...हो...! बहुत अच्छा कहते हैं, मुझे बहुत अच्छा आशीर्वाद दिया। समझे? **उस म्लेच्छ ने आशीर्वाद**

www.vitragvani.com

अंगीकार किया। आशीर्वाद अंगीकार करता है। यह दृष्टान्त है, यह तो दृष्टान्त है।

इसी प्रकार अज्ञानी जीव को.... वह म्लेच्छ, यह अज्ञानी। **आचार्य ने अज्ञानी जीव को 'आत्मा' शब्द कहकर....** देखो, विशिष्टता! आत्मा - ऐसा कहा। आत्मा समझाना है न? अनन्त काल में आत्मा, देह में क्या चीज़ है — उसकी कभी पहिचान नहीं की। दूसरा सब बहुत किया, व्यवहार क्रियाकाण्ड — दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा, तप आदि सब अनन्त बार बहुत बार किया, परन्तु आत्मा क्या है — यह कभी समझा नहीं। इसलिए यहाँ **आचार्य ने अज्ञानी जीव को 'आत्मा' शब्द कहकर उपदेश दिया...** भाई! तू आत्मा है। समझ में आया? **आचार्य ने अज्ञानी जीव को 'आत्मा' शब्द कहकर उपदेश दिया तब वह कुछ नहीं समझा....** सुननेवाले को कुछ पता पड़ता नहीं (कि) क्या कहते हैं? आत्मा... आत्मा क्या कहते हैं? आत्मा क्या? (जैसे) वह (म्लेच्छ) स्वस्ति का अर्थ नहीं जानता; वैसे यह आत्मा का अर्थ नहीं जानता। क्या कहते हैं यह? समझे न?

कुछ नहीं समझा और आचार्य की तरफ देखता रह गया। कहनेवाले सन्त की ओर आत्मा सुननेवाला देखता रह गया। क्या कहते हैं यह? आत्मा... आत्मा क्या कहते हैं? **तब निश्चय और व्यवहारनय के ज्ञाता आचार्य ने....** वे आचार्य अथवा दूसरा कोई आया। **व्यवहारनय के द्वारा भेद उत्पन्न करके उसे बताया....** कहनेवाला निश्चय का भी जाननेवाला है। उस आत्मा सुननेवाले को आचार्य ने कहा कि आत्मा... तू आत्मा। वह नहीं समझा तो दूसरा आया, जो आत्मा शुद्ध चैतन्यस्वरूप आनन्द है, उसे भी जानता है और राग, पुण्य, विकार, शरीर, देव — ऐसे संयोग से कहता है, उसे उसका ज्ञान है, दोनों का ज्ञान है, वैसे आचार्य उसे उपदेश देते हैं। समझ में आया? **निश्चय और व्यवहारनय के ज्ञाता....** अर्थात् जिसे, भगवान आत्मा शुद्ध आनन्द चैतन्यस्वरूप है, वह निश्चय है, उसका भी भान है और उस आत्मा को देव-आत्मा, मनुष्य-आत्मा, क्रोधी-आत्मा, मानी-आत्मा, एकेन्द्रिय-आत्मा, स्त्री-आत्मा, पुरुष-आत्मा — ऐसे व्यवहार से कहते हैं, उसका भी उसे ज्ञान है। निश्चय और व्यवहार दोनों का ज्ञान है। माँगीरामजी! समझ में आया?

www.vitragvani.com

व्यवहारनय के द्वारा भेद उत्पन्न करके उसे बताया कि – जो यह देखनेवाला,... भाई! तुझे 'आत्मा' — ऐसा कहा, उसका अर्थ यह है कि देखनेवाला, अन्दर देखनेवाला, देखनेवाला, वह आत्मा; जाननेवाला, वह आत्मा — ऐसा भेद पाड़कर कहा। अभेद से तो आत्मा को एकरूप कहा। वह अभेद से समझा नहीं; आत्मा — ऐसा कहा तो समझा नहीं; इसलिए फिर व्यवहार से समझाया। व्यवहार से समझाया (कि) देख भाई! अन्दर देखता है न? अन्दर देखता है न? वह देखनेवाला आत्मा, जाननेवाला आत्मा और **आचरण करनेवाला पदार्थ है, वही आत्मा है,....** जो आचरण करनेवाला है, स्वरूप में स्थिर रहनेवाला है, वह आचरण करनेवाला, वह आत्मा है। क्या कहा समझ में आया? भेद पाड़कर तीन प्रकार से समझाया। भेद करके समझाया वह भेद, वह भेद व्यवहार है। समझाना है आत्मा।

यह धर्म की मूल चीज पहले आत्मा से ही शुरु किया है। आत्मा के भान बिना सब व्यर्थ है। समझ में आया? अनन्त बार नौवें ग्रैवेयक गया। 'मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो, पै निज आतमज्ञान बिना सुख लेश न पायो।' आत्मा क्या चीज है – उसे जाने बिना अंशमात्र भी कभी किसी को धर्म नहीं होता।

(यहाँ) कहते हैं कि आचार्य ने श्रोता को 'आत्मा' — ऐसा कहा। ऐसा न समझा तो निश्चय और व्यवहार दोनों की जाननेवाले दूसरे धर्मात्मा–निश्चय / अभेद को भी जानते हैं और व्यवहार / भेद को भी जानते हैं। ये जाननेवाले, उसे भेद से बात करते हैं। समझ में आया? जाननेवाले उसे भेद से बात करते हैं। आत्मा समझा नहीं, स्वस्ति कहा, वह समझा नहीं। तेरा भला हो। वैसे ही आत्मा का अर्थ समझा नहीं। समझ में आया? इसका अर्थ किया — देखनेवाला। भाई! अन्दर देखता है, जिसमें दिखता है; और जिसमें दिखता है, जिसमें ज्ञात होता है, जो आचरण करता है, वह आत्मा हैं — ऐसा भेद डालकर उसे समझाया। **तब सहज परमानन्द दशा को प्राप्त होकर....** यहाँ तो बहुत थोड़ी बात की है। सद्भूत व्यवहार की बात पहले की।

देख भाई! तुझे 'आत्मा' — ऐसा कहा तो तू आत्मा समझा नहीं तो हम तुझे भेद करके, व्यवहार करके, व्यवहारमार्ग करके, भेद का लक्ष्य कराकर तुझे अभेद बतलाते

www.vitragvani.com

हैं। क्या? भाई! यह आत्मा क्या? शरीर, आत्मा नहीं; वाणी, आत्मा नहीं; कर्म, आत्मा नहीं। तो क्या? जाननेवाला, जो जानता है न? जानता है - देखता है और जानने-देखने में जरा टिकता है - आचरण करता है, आत्मा है। समझ में आया? राग करनेवाला आत्मा — ऐसा नहीं कहा। यह है ही नहीं। फिर कहेंगे परन्तु समझाना है आत्मा; परन्तु पहले तो यह भेद डालकर समझाया। भाई! यह आत्मा जो अन्दर है, वह जानता है - देखता है और आचरण करने की क्रिया आत्मा में होती है; आत्मा में, हों! यह आचरण करनेवाला अर्थात् दर्शन-ज्ञान-चारित्रस्वरूप — इन तीन को जो प्राप्त हो, उसे हम आत्मा कहते हैं। कहो, समझ में आया?

तब... पात्र जीव है न? देखो! **सहज परमानन्द दशा को प्राप्त होकर....** देखो! यह धर्म! उसे कहा कि भाई! प्रभु! तू आत्मा है। यह देहादि तो मिट्टी-धूल है; कर्म आदि तो मिट्टी है। आठ कर्म जड़ हैं। तू आत्मा है। कौन हो? जानना-देखना-स्थिर होना — ऐसा तू आत्मा है। आत्मा तो एकस्वरूप ही है, परन्तु तीन भेद करके बतलाया, वह व्यवहार करके बतलाया है। समझ में आया? व्यवहार करके बतलाया तो व्यवहार में रखने के लिये नहीं बतलाया। समझ में आया? व्यवहार से बतलाया परन्तु तेरा लक्ष्य व्यवहार पर रहे, इसके लिये नहीं बतलाया। जानने-देखनेवाला, वह आत्मा। आत्मा अभेद है, उसे भेद डालकर — बतलाकर अभेद बतलाया। सूक्ष्म बात है। इसने अनन्त काल से यह बता जानी नहीं। समझ में आया?

कहते हैं, जब ऐसा आत्मा इसके ख्याल में आया कि ओहो...! यह जाननेवाला आत्मा, देखनेवाला आत्मा और जिसमें एकाग्र होता है - अन्दर स्थिर होता है, रमता है, वह आत्मा। एक आत्मा को तीन भेद डालकर बतलाया, वह व्यवहारनय से कहा है। व्यवहारनय से कहकर बतलाया अभेद आत्मा। भेद डालकर बतलाया अभेद। भेद, अभेद को बताता है; भेद, भेद में रहने के लिये नहीं बताते। समझ में आया? भेद से कहा, तब उसकी दृष्टि गयी। ओहो! यह जानने-देखनेवाला और स्थिरता-आचरण करनेवाला, वह आत्मा — इस प्रकार सुननेवाले की अन्तर्दृष्टि (हुई)। जो भेद कथन सुनने में आया, उसका लक्ष्य छोड़कर अभेद पर (दृष्टि) गयी तो **सहज परमानन्द दशा को प्राप्त**

www.vitragvani.com

होकर.... तब शुद्ध अभेद आत्मा पर दृष्टि जाने से उसकी वर्तमान दशा में स्वाभाविक परमानन्द दशा अर्थात् पर्याय की प्राप्ति हुई। इसका नाम सम्यग्दर्शन–ज्ञान और चारित्र धर्म कहते हैं। किसका नाम ?

जो भेद से कहा, उस भेद का लक्ष्य छोड़कर, यह आत्मा अन्दर शुद्ध चैतन्य दर्शन को प्राप्त, ज्ञान को प्राप्त, स्थिरता को प्राप्त — ऐसे तीन को लक्ष्य में लेकर अन्दर अभेद में गया। एकरूप चैतन्यप्रभु आत्मा अभेद है — ऐसी अन्तर्मुख दृष्टि करने से अपनी वर्तमान दशा में आत्मा में, जो स्वाभाविक अतीन्द्रिय आनन्द था, उसकी अन्तर श्रद्धा करने से, पर्याय में अतीन्द्रिय आनन्द का वेदन–अनुभव आया, इसका नाम सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र धर्म कहा जाता है। समझ में आया ? भाई ! सूक्ष्म बात है। भाषा भले हिन्दी हो, परन्तु भाव तो जैसा हो, वह आवे न ! ये दिल्ली से आये हैं, इन्होंने माँग की थी (हिन्दी में लेने की)। समझ में आया ?

भगवान अमृतचन्द्राचार्य मुनि दिगम्बर सन्त, ९०० वर्ष पूर्व (हुए)। कुन्दकुन्दाचार्य महाराज दो हजार वर्ष पहले हुए। महा दिगम्बर सन्त (थे), परमात्मा के पास गये थे। सीमन्धर भगवान के पास कुन्दकुन्दाचार्य दो हजार वर्ष पहले (गये थे)। आठ दिन रहे थे। वहाँ से आकर समयसार, प्रवचनसार, नियमसार आदि शास्त्र बनाये। उनकी टीका अमृतचन्द्राचार्य ने की। उन अमृतचन्द्राचार्य ने यह पुरुषार्थ–सिद्धि–उपाय शास्त्र बनाया। दिगम्बर सन्तु वनवासी–जंगल में रहनेवाले।

निश्चय और व्यवहार का क्या स्वरूप है और व्यवहार किसलिए कहा जाता है ? व्यवहार को कहते हैं और सुननेवाला व्यवहार को ही मान लेता है, वह सुनने के योग्य नहीं है — ऐसी दो बातें करते हैं। व्यवहार की आवश्यकता क्या ? कि समझाने के लिये आवश्यकता है। समझाने के लिये, हों ! करने की बात नहीं है।

आत्मा अखण्डानन्द प्रभु एक समय में पूर्ण शुद्ध चैतन्य सत्व, दल, 'सिद्ध समान सदा पद मेरो' — सिद्धस्वरूप उसका स्वभाव है। उस एक को, अभेद को सीधे नहीं जाननेवाले ऐसे अनादि अज्ञानी जीव को आचार्यों ने व्यवहार अर्थात् भेद करके समझाया,

www.vitragvani.com

इतना व्यवहार का प्रयोजन है। व्यवहार से निश्चय को बतलाया, भेद से अभेद बतलाया - इतना व्यवहार का प्रयोजन है। तब वह आत्मा समझ जाता है। ओहो!

भगवान सन्त आचार्य, परमेश्वर केवलज्ञानी (कहते हैं) आत्मा अन्दर जानन-देखन, स्थिरता करनेवाला, वह आत्मा (है) — ऐसी अन्तर्मुख दृष्टि करके अपनी दशा में सम्यक् श्रद्धा-ज्ञानसहित परम अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद आया, उसका नाम 'भगवान आत्मा जाना' — ऐसा कहा जाता है। गजब बात! समझ में आया? यह चौथे गुणस्थान की सम्यग्दृष्टि की बात है, हों! श्रावक तो बाद में होता है, मुनि तो कहीं बाद में होता है। यह तो अभी चौथे गुणस्थान की बात है। अविरत सम्यग्दृष्टि! कुशलालजी! क्या है? कुछ ऊँची बात है? पहली तो बात है। अज्ञानी को समझाया और उसने ज्ञान प्राप्त किया, उसकी तो बात है।

अनादि का अज्ञानी था - ऐसे आत्मा को आचार्य ने कहा कि आत्मा। इतने से वह समझा नहीं तो दूसरे दुभाषिया ने, जिसे निश्चय का भी भान है और व्यवहार का कथन किस प्रकार होता है — उसका भी ज्ञान है। उसने उसे व्यवहार से भेद पाड़कर समझाया। देख, भाई! आचार्य महाराज कहते हैं कि आत्मा। तू आत्मा को ऐसे समझना कि जाननेवाला, वह आत्मा; देखनेवाला, वह आत्मा। उसमें कहीं तीन भेद नहीं है; वस्तु एक अखण्ड है। समझ में आया? जैसे सुवर्ण की ईंट एक है, ईंट, उसमें तीन भेद करना — पीताश, चिकनाहट, वजन - वह सोना। उसमें तीन भेद नहीं है, वस्तु तो एक है। इसी प्रकार आत्मा है तो अभेद अनन्त गुण का पिण्ड एक है, परन्तु उसे भेद पाड़े बिना अज्ञानी को समझ में नहीं आता। समझ में आया? माँगीरामजी! गजब बात भाई! समझाने में भी यह बात, हों! पहले तू ऐसा कर तो तुझे (धर्म) होगा — ऐसी बात इसमें नहीं आयी। समझ में आया? पहले तू कषाय की मन्दता कर तो तुझे तुरा आत्मा समझ में आयेगा — ऐसा इसमें नहीं आया। समझ में आया? आया क्या?

भगवान अमृतचन्द्राचार्य सन्त दिगम्बर महामुनि वनवासी, परमात्मा त्रिलोकनाथ परमेश्वर तीर्थंकरदेव ऐसा फरमाते हैं कि अज्ञानी अनादि से आत्मा को जानता नहीं; उसे हम भेद पाड़कर समझाते हैं, इतना व्यवहार का प्रयोजन है... विजयमूर्तिजी! समझ में

www.vitragvani.com

आया ? व्यवहार करते-करते निश्चय होता है — यह बात ही यहाँ नहीं है। समझ में आया ? यहाँ तो इतना कहना है कि यह वस्तु भगवान आत्मा, इस देह अर्थात् मिट्टी से भिन्न है। यह (देह) तो मिट्टी-माँस है और अन्दर कर्म जो है, वह तो जड़ है और अन्दर में राग-द्वेष विकार होता है, वह तो मैल है; उनसे रहित भगवान आत्मा, जिसमें अनन्त शान्ति, अनन्त आनन्द, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अपरिमित वीर्य आदि है - ऐसा यह आत्मा। ऐसा यह आत्मा — ऐसे सीधे कहे, तो अनादि अज्ञानी समझता नहीं। अनादि का अज्ञानी है; इसलिए भेद पाड़कर कहा — भाई! ज्ञान, वह आत्मा; देखे, वह आत्मा; आचरण करे - अन्तर में एकाग्र हो, वह आत्मा — ऐसे तीन भेद पाड़कर आत्मा को बतलाया, तो सुननेवाला, सुननेवाला ऐसा पात्र था कि यह सुना और सुनकर अन्तरर्दृष्टि की। जो इन्होंने बतलाया, वहाँ दृष्टि गयी। ओहो! इस आत्मा शुद्ध चैतन्यस्वरूप, अभेदस्वरूप पर उसकी दृष्टि गयी। उस पर दृष्टि जाने से सहज परमानन्ददशा प्राप्त हुई।

अनादि से जो राग और पुण्य, विकार के साथ एकत्वबुद्धि थी, उसमें आकुलता थी। अनादि से पुण्य-पाप के विकल्प, जो राग है, उनके साथ एकत्वबुद्धि थी। उसमें आत्मा का बोध नहीं था, उसमें विकार है, उस पर लक्ष्य था; इससे विकार की एकता में विकार-आकुलता का अनुभव था। वही आत्मा जब अखण्ड अभेद... भेद का लक्ष्य छोड़कर अभेद पर दृष्टि गयी तो अपनी पर्याय में, वर्तमान दशा में जो राग की एकताबुद्धि थी वह, स्वभाव पर दृष्टि गयी तो राग की एकताबुद्धि छूट गयी और स्वभाव के साथ एकता हुई तो आकुलता मिटकर, सम्यग्ज्ञान होकर, सम्यग्दर्शन होकर, स्वरूप में आंशिक स्थिर होकर परमानन्द की शान्ति का-आनन्द का अनुभव हुआ; इसका नाम 'आत्मा जाना' — ऐसा कहा जाता है। समझ में आया ? आहा...हा...! भाई! कुछ समझ में आता है ? गजब बात! अभी यह बात ऐसी है। अन्दर की मूल चीज चलती नहीं, इसलिए ऊपर-ऊपर से मानो कुछ ले लें। ऐसी चीज है नहीं।

परमेश्वर त्रिलोकनाथ तीर्थंकरदेव, जिन्होंने एक सेकेण्ड के असंख्य भाग में तीन काल-तीन लोक जाने और सौ इन्द्रों की उपस्थिति में समवसरण में जिनकी दिव्यध्वनि निकली। दिव्यध्वनि-आवाज-ॐध्वनि। उसमें यह आया। वह सन्त कहते हैं। समझ में

www.vitragvani.com

आया? भाई! हमारा व्यवहार कहने का प्रयोजन इतना है कि अज्ञानी, अकेला अभेद आत्मा अनादि से अज्ञान के कारण जानता नहीं; इसलिए अभेद में भेद करके, उसमें गुण-गुणी का भेद करके (समझाते हैं)। गुण-गुणी तो अभेद ही है। शक्कर में मिठास और शक्कर दोनों एक ही है, परन्तु मिठास; वह शक्कर — ऐसा भेद करके शक्कर बतलानी है। इसी प्रकार गुण-ज्ञान, दर्शन, आनन्द वे आत्मा से अभेद हैं, परन्तु जो समझता नहीं, उसे बतलाते हैं कि भाई! जाननेवाला, वह आत्मा। जो जानने की क्रिया होती है न, वह आत्मा; श्रद्धा करे, वह आत्मा; देखता है, वह आत्मा; स्थिर होता है, वह आत्मा; परन्तु अभेद आत्मा में ले जाना है। ऐसे भेद करके अभेद को बतलाना — इतना व्यवहार का प्रयोजन है; इसलिए आचार्यों ने व्यवहार का उपदेश दिया है। समझ में आया? बहुत स्पष्टीकरण करते हैं। व्यवहार का प्रयोजन तो भेद पाड़कर बतलाना, इतना है। ऐसा नहीं कहा कि तू पहले व्यवहार कर तो फिर तुझे निश्चय होगा — ऐसे व्यवहार का उपदेश देना है - ऐसी बात नहीं है। समझ में आया?

सहज परमानन्द दशा को प्राप्त होकर.... अब क्या हुआ? देखो! **वह आत्मा को निजस्वरूप से अंगीकार करता है।** जो अनादि से आत्मा को पुण्य-पाप के रागसहित, शरीरसहित, मान्यता में अंगीकार किया था, वह अपना निज स्वरूप, तीन भेद करके अभेद पर दृष्टि की तो **आत्मा को निजस्वरूप से अंगीकार करता है।** देखो! अन्तर शुद्ध चिदानन्दस्वरूप निर्विकल्प परमानन्द वीतराग समरसी प्रभु को **स्वरूप से अंगीकार करता है।** राग से नहीं, भेद से नहीं, निमित्त से नहीं। समझ में आया? भाषा तो बहुत सादी है, हों! भाव ऊँचे हैं, परन्तु भाषा कोई ऐसी नहीं, सादी है, यह हिन्दी भी सादी है। हमारी हिन्दी तुम्हारे जैसी नहीं है। समझ में आया? शोभालालजी! परन्तु कुछ गरज ही नहीं है — आत्मा क्या चीज है? ऐसे के ऐसे अन्ध दौड़ जाता है। जिन्दगी पूरी करके जाए फिर चौरासी के अवतार में।

परमेश्वर त्रिलोकनाथ तीर्थंकरदेव परमात्मा, जहाँ बड़े सौधर्म और ईशान इन्द्र की उपस्थिति में भगवान की वाणी में आया है। समझ में आया? व्यवहार का उपदेश क्यों दिया? अकेले अभेद को अनादि से समझता नहीं, इसलिए उसे भेद करके बतलाया,

www.vitragvani.com

उतना व्यवहार का प्रयोजन है, परन्तु बतलाना है अभेद। समझ में आया? इस व्यवहार का झगड़ा है। कहो, धर्मचन्दजी! क्या है? व्यवहार बीच में आया या नहीं? व्यवहार के बिना निश्चय होता है? व्यवहार के बिना निश्चय होता है?... बहुत कठिन बात है। यहाँ तो साथ-साथ की बात भी नहीं।

यहाँ तो वस्तु जो अखण्ड आनन्दस्वरूप है, एक स्वरूप है, उस अभेद का जिसे लक्ष्य नहीं है, उसे भेद पाड़कर बतलाया, बस! इतनी बात है। भेद है और अभेद है — ऐसी यहाँ बात नहीं है। भेद से बतलाकर उसे अभेद बतलाया। अभेद पर दृष्टि गयी तो उसे आत्मज्ञान हुआ, तब उसे सम्यग्दर्शन हुआ, बस! इतनी बात है। लोगों को, एक तो फुर्सत नहीं मिलती, फुर्सत हो तो उल्टे रास्ते दौड़ गये। वास्तविक तत्त्व क्या है, (उसका पता नहीं पड़ा)। परमेश्वर वीतराग त्रिलोकनाथ परमेश्वर तीर्थंकरदेव ने केवलज्ञान में कैसा आत्मा देखा, कैसा है, कैसा कहा? विधि क्या है? और क्या विधि बतलाते हैं? वह समझा नहीं।

यहाँ तो कहते हैं कि जब अज्ञानी को ऐसा कहा... आहाहा! इतने शब्द! यहाँ तो भाई! आत्मा शब्द से ही बात उठाई है। वस्तु ही यह कहनी है न? 'लाख बात की बात यही निश्चय उर आनो' — छहढाला में आता है। दौलतरामजी की छहढाला है न? छहढाला है। 'लाख बात की बात (यही) निश्चय उर आणो।' भेद करके बतलाया, परन्तु निश्चय लक्ष्य में लेना। भगवान आत्मा एकस्वरूप, दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीन का लक्ष्य करके यहाँ लक्ष्य किया तो भेद का लक्ष्य छूट गया, भेद का लक्ष्य छूट गया। व्यवहार का लक्ष्य छूट गया, तब निश्चय का लक्ष्य हुआ। भेद का लक्ष्य था तो अभेद हुआ—ऐसा भी नहीं रहा। समझ में आया? राजमलजी! भेद का लक्ष्य हुआ, इसलिए अभेद हुआ—ऐसा भी नहीं। भेद के लक्ष्य से अभेद का लक्ष्य किया। ज्ञान, (वह) आत्मा—ऐसे भेद का लक्ष्य छूट गया, तब अकेला अभेद दृष्टि में आया। पहले भेद लक्ष्य में लिया, इसलिए अभेद का लक्ष्य हुआ — ऐसा नहीं। भेद का लक्ष्य समझाने के लिये आता है कि यह ज्ञान, इतना। वह लक्ष्य छोड़कर अभेद में जाता है, तब आत्मा का अनुभव / सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान उसे होता है, जो धर्म की पहली सीढ़ी है। समझ में आया? आहा...!

ये जवान, संसार के अभ्यास के लिये, देखो न! कितना सिर फोड़ते हैं न? कितना

www.vitragvani.com

सिर फोड़ते हैं, बी.ए. और एल.एल.बी. के लिये। धूल में भी कुछ नहीं। ऐ...ई...! शान्तिभाई! अज्ञान के लिये इतना सिर फोड़ते हैं न? आत्मा के लिये कुछ मेहनत करे या नहीं? — ऐसा कहना है। ५००-१००० (रुपये) वेतन के लिये तो बेचारे मर जाएँ। महीने मासिक एक पाँच सौ मिले, हजार मिले, उसके लिये पढ़ा करे, पढ़ा करे। नींद आवे तो सिर पर चोटी बाँधे। ऐसी पढ़ाई पाप की और फल में पाप तथा पढ़ने के बाद भी पैसा मिले, वह पूर्व का पुण्य होवे तो मिले, कोई पढ़ने से मिलते नहीं। पढ़े बिना भी मिलते हैं। पढ़े बिना के ठोठ विद्यार्थी अभी लोटिया बोरा महीने में पाँच-पाँच लाख की आमदनी करते हैं। उसमें धूल में क्या है? समझ में आया? ऐ...ई! यहाँ कहते हैं — संसार की पढ़ाई के लिये इतना प्रयत्न करता है तो जरा आत्मा के लिये अनन्त काल का परिभ्रमण मिटाना है, चौरासी के अवतार के दुःख का अभाव करना है, सुख की प्राप्ति करनी है — उसका उपाय तो इसे भलीभाँति समझना चाहिए। समझ में आया?

बहुत संक्षिप्त में यह अर्थ भी टोडरमलजी का है न! गाथा अमृतचन्द्राचार्य की और अर्थ टोडरमलजी के। मोक्षमार्गप्रकाशक के करनेवाले हुए न? सुना है? टोडरमलजी, मोक्षमार्गप्रकाशक के करनेवाले। अभी जयपुर में पाँच लाख का हॉल हुआ है। टोडरमल स्मृति हॉल। जयपुर में पूरणचन्द गोदिका गृहस्थ है न? उन्होंने बनाया है। हम जानेवाले हैं। फाल्गुन शुक्ल दूज को उद्घाटन है। पाँच लाख का एक हॉल - 'टोडरमल स्मृति हॉल' एक गृहस्थ ने बनाया है। मोक्षमार्गप्रकाशककर्ता टोडरमल बहुत होशियार, बहुत होशियार। उन्होंने यह अर्थ किया है — ऐसा कहना है। यह अर्थ। पहले तो गुजराती में लेते थे। भाई ने कहा कि थोड़ा हिन्दी में लो। थोड़ा, हों! ऐसा बोले। थोड़ा हिन्दी में लो, भाई ने तो ऐसा कहा था कि थोड़ा हिन्दी में लो। मैंने कहा - थोड़ा क्या? पूरा हिन्दी में लिया। समझ में आया? यह हिन्दी है टोडरमलजी की, उसमें से गुजराती बनाया है। क्या कहते हैं? देखो!

वह आत्मा को निजस्वरूप से अंगीकार करता है। देखो! अज्ञानी को आत्मा, भेद से समझाने के पश्चात् भेद का लक्ष्य छोड़कर अन्तर स्वरूप में आत्मा के शुद्ध चैतन्यस्वरूप को अंगीकार करता है। शुद्ध चैतन्यस्वरूप को अंगीकार करता है - उसका

www.vitragvani.com

आश्रय करके अनुभव करता है, इसका नाम सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान कहा जाता है; साथ में स्वरूपाचरण भी प्रगट होता है, साथ में अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद भी (आता है)। आत्मा के भान में–सम्यग्दर्शन में आत्मा के अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद भी साथ में आता है।

इस प्रकार यह सद्भूत–व्यवहारनय का उदाहरण दिया। सद्भूत–व्यवहारनय समझे? अन्दर ज्ञान–दर्शन है न? भेद पड़ा, इसलिए व्यवहार। बाकी है उसमें। ज्ञान, दर्शन, शान्ति उसमें (आत्मा में) है, उसका नाम सद्भूत, परन्तु भेद करके बतलाया, इसलिए व्यवहार। पहले सद्भूत व्यवहार का दृष्टान्त देकर समझाया।

मुमुक्षु : सत्यार्थ कहलाये?

उत्तर : सत्यार्थ नहीं कहलाये; व्यवहार असत्यार्थ है। सद्भूत है न? सत्यार्थ कहलाये या नहीं? — ऐसा कहते हैं। व्यवहार, उसमें है परन्तु व्यवहार भेद है, इसलिए असत्यार्थ है। समझ में आया? सद्भूत व्यवहार भी असत्यार्थ, असद्भूत व्यवहार भी असत्यार्थ। सब उपचरित, अनुपचरित भेद सब असत्यार्थ। भेद कहाँ अन्दर में अभेद है? समझ में आया?

देखो! यह चन्दन की लकड़ी है, चन्दन की। इसमें सुगन्ध, चिकनाहट के भेद हैं इसमें? सुगन्ध और चिकनाहट के भेद हैं? यह तो अखण्ड है। भेद करने बताना, वह भेद असत्यार्थ है; वस्तु अभेद सत्यार्थ है। इसी प्रकार आत्मा में ज्ञान, दर्शन, आनन्द एकसाथ हैं, परन्तु भेद करके बताना कि ज्ञान, वह आत्मा; ऐसा भेद करना असत्यार्थ है। समझ में आया? एक दृष्टान्त दिया।

आगे असद्भूतव्यवहारनय का उदाहरण देते हैं। अब दूसरा। पहले सद्भूत का–नजदीक का कहा। अब असद्भूत का दृष्टान्त देकर आत्मा को समझाते हैं। **जैसे मिट्टी के घड़े को....** पहले स्वस्ति का, ब्राह्मण का दृष्टान्त दिया था। म्लेच्छ और ब्राह्मण। सद्भूत व्यवहार नय (के लिये वह दृष्टान्त दिया था)। इसमें घी के घड़े का दृष्टान्त है। **जैसे घृत से संयुक्त मिट्टी के घड़े को....** मिट्टी का घड़ा घी सहित है। उसमें घी भरा हुआ है। **व्यवहार से घी का घड़ा कहते हैं।** है तो मिट्टी का, परन्तु घी के सम्बन्ध से

www.vitragvani.com

घड़े को घी का घड़ा कहते हैं। घी का है नहीं, परन्तु घी का सम्बन्ध है, इसलिए घी का घड़ा कहते हैं।

यहाँ कोई पुरुष जन्म से ही उसको घी का घड़ा जानता है। पहले से घी का घड़ा जानता है; कभी खाली कोरा घड़ा देखा नहीं। घी का घड़ा... घी का घड़ा। घर में होता है न घी का घड़ा? घी की बरनी... घी की बरनी। **जब कोई पुरुष घृत का घड़ा कहकर उसे समझाता है तभी वह समझता है....** उसे घी का ही घड़ा दिखता है। घी से खाली तो कभी देखा नहीं। खाली घड़ा... घड़ा कहे तो समझे नहीं। खाली घड़ा कहे तो फिर कोई कुम्हार का घड़ा समझ जाए। यह घी का घड़ा कहकर मिट्टी का घड़ा समझाना है। **घृत का घड़ा कहकर उसे समझाता है तभी वह समझता है....** भाई! घी का घड़ा घीमय नहीं, मिट्टीमय है। घी का घड़ा, घी के संयोग से, घी के सम्पर्क से, घी के रहने के संयोग से घड़े को घी का कहा, परन्तु घी का घड़ा, घी का घड़ा नहीं है, मिट्टी का है — ऐसा समझाना है।

उससे मिट्टी का घड़ा कहकर सम्बोधन किया जाय तो वह किसी दूसरे कोरे घड़े को समझ बैठता है... देखो! समझे? कोई अकेला मिट्टी का कहे तो कोरा घड़ा समझ ले। **निश्चय से विचार किया जाय तो घड़ा मिट्टी का ही है....** घड़ा तो मिट्टी का है, घी का है? घी का घड़ा कभी बना है? घी का घड़ा कभी बना है? **परन्तु उसको समझाने के लिये 'घृत का घड़ा' कहकर ही सम्बोधन करना पड़ता है।** क्योंकि उसने घी से खाली कोरा घड़ा कभी देखा नहीं था; इसलिए उसे समझाने के लिये घी का घड़ा कहकर मिट्टी का घड़ा समझाना है। **'घृत का घड़ा' कहकर ही सम्बोधन करना पड़ता है।**

उसी प्रकार.... यह दृष्टान्त (कहा)। (अब) सिद्धान्त। **उसी प्रकार यह चैतन्यस्वरूप आत्मा....** भगवान आत्मा तो चैतन्य - ज्ञान, दर्शन, आनन्दस्वरूप आत्मा है। चैतन्यस्वभाव आत्मा, चैतन्यस्वरूप आत्मा (है।) जैसे वह मिट्टी का घड़ा है, वैसे चैतन्यस्वरूप आत्मा। **कर्मजनित पर्याय से....** जैसे वह मिट्टी का घड़ा, घी के संयोग से था; वैसे अनादि (से) चैतन्यस्वरूप आत्मा, कर्म के निमित्त से **पर्याय से संयुक्त है।**

www.vitragvani.com

कर्म के संयोगसहित है। **उसे व्यवहार से देव, मनुष्य इत्यादि नाम से कहते हैं।** कर्म के निमित्त से उत्पन्न हुए देव, मनुष्यपना, देव-आत्मा, मनुष्य-आत्मा, तिर्यंच-आत्मा — ऐसा कहना; घी का घड़ा कहना, वैसे आत्मा को देव-आत्मा, मनुष्य-आत्मा — ऐसी कर्मजनित पर्यायों से उसे बतलाना, ऐसा उसे असद्भूत व्यवहारनय से आत्मा को बताते हैं। समझ में आया? भाई! यह तो सादी भाषा है, यह कोई बहुत सूक्ष्म नहीं है।

अनादि आत्मा, कर्मजनित पर्याय से; कर्म से उत्पन्न हुई देव, मनुष्य आदि गति है न? उनसे संयुक्त है, सहित है। **उसे व्यवहार से देव, मनुष्य इत्यादि नाम से कहते हैं।** भाई! यह गाय का आत्मा – ऐसा कहते हैं न? मनुष्य का आत्मा। मनुष्य, गाय का आत्मा नहीं है; आत्मा तो आत्मा का है। घी का घड़ा नहीं है, घड़ा तो मिट्टी का है, परन्तु घी के संयोग से घड़ा बतलाना है। देखो, यह घड़ा! इसी प्रकार यह गाय का आत्मा, देखो! यह भैंस का आत्मा, देखो! यह अश्व का आत्मा। अश्व और भैंस तो पुद्गल है, उनका आत्मा है? आत्मा तो भिन्न है, परन्तु उसने भिन्न कभी देखा नहीं तो उसे कर्मजनित संयोग पर्याय से बताते हैं। भाई! देव, वह आत्मा; मनुष्य, वह आत्मा; यह स्त्री का आत्मा; यह पुरुष का आत्मा — ऐसा कर्मजनित पर्याय बताकर कहते हैं।

अज्ञानी जीव अनादि से उस आत्मा को देव, मनुष्य इत्यादि स्वरूप ही जानता है। अनादि से ऐसा ही जानता है, लो! आत्मा अर्थात् यह देव, यह मनुष्य आत्मा। देव-मनुष्य तो जड़-मिट्टी है। आत्मा तो भिन्न है। यह (शरीर) तो मिट्टी है, धूल है। सत्य बात होगी? यह तो माँस और हड्डियों का पुतला है। अन्दर भगवान आत्मा तो अरूपी आनन्दकन्द चैतन्यस्वरूप है; भिन्न है परन्तु कभी भिन्न देखा नहीं। संयोग से देखता है, इसलिए संयोग से समझाया है कि देख भाई! देव, वह आत्मा। आत्मा वापस देव नहीं, हों! देव, वह आत्मा। देव, आत्मा नहीं, मनुष्य, वह आत्मा परन्तु आत्मा मनुष्य नहीं। घी का घड़ा कहा; घड़ा घी का नहीं, घड़ा तो मिट्टी का है। समझ में आया?

निश्चय से विचार करें तो आत्मा.... देखो! **आत्मा को देव, मनुष्य इत्यादि स्वरूप ही जानता है। जब कोई उसे देव, मनुष्य वगैरह नाम से संबोधित करके समझावे तभी समझ पाता है और यदि आत्मा का नाम चैतन्यस्वरूप कहे...** पहला

www.vitragvani.com

कोरा घड़ा कहा न? कोरा घड़ा। **आत्मा का नाम चैतन्यस्वरूप कहे...** चैतन्यस्वरूप आत्मा, वह तो परमेश्वर हुए, कोई ईश्वर होगा, कोई परमेश्वर होगा। यह चैतन्यस्वरूप आत्मा है — ऐसा वह नहीं समझता। **आत्मा का नाम चैतन्यस्वरूप कहे तो अन्य किसी परमब्रह्म परमेश्वर को समझ बैठता है।** और सीधे आत्मा समझे नहीं। चैतन्यस्वरूप आत्मा न समझे कि मैं चैतन्यस्वरूप — ऐसा न समझे। देव, वह आत्मा; मनुष्य, वह आत्मा; पर्याप्त, वह आत्मा - ऐसा कहा। समझ में आया?

निश्चय से विचार करें तो आत्मा चैतन्यस्वरूप ही है.... जैसे निश्चय से विचार करे तो घड़ा तो मिट्टी का है। घी के संयोग से मिट्टी का घड़ा बतलाया है, क्योंकि अकेला घड़ा नहीं समझता इसलिए। इसी प्रकार देव, मनुष्य आदि पर्याय बतायी कि यह आत्मा। तेरा लक्ष्य आत्मा पर जाना चाहिए; देव, मनुष्य से हटना चाहिए। देव, मनुष्य कहे तो वह समझ जाए परन्तु यदि चैतन्यस्वरूप कहे तो वह समझ नहीं सकता; किसी परम ब्रह्म आत्मा को समझ ले। **निश्चय से विचार करें तो आत्मा चैतन्यस्वरूप ही है....** देखो! भगवान आत्मा तो चैतन्य — ज्ञान-दर्शन का सूर्य है। आहाहा! आत्मा अर्थात् ज्ञान। ज्ञान-दर्शन के सूर्यस्वरूप है। राग, शरीर, कर्मस्वरूप आत्मा है ही नहीं। आहाहा! समझ में आया?

आबालगोपाल — बालक से लेकर वृद्ध, पशु से लेकर स्वर्ग, सब अन्तर आत्मा जो है, वह चैतन्यस्वरूप आत्मा है; जानन-देखन स्वभावस्वरूप आत्मा है। राग, शरीर, कर्मस्वरूप आत्मा है ही नहीं; परन्तु सीधे नहीं समझे, उसे देव, मनुष्य कहकर बतलाया। देव, मनुष्य का लक्ष्य छोड़कर आत्मा का लक्ष्य करना। समझ में आया? **परन्तु अज्ञानी को समझाने के लिये आचार्यदेव गति, जाति आदि के भेद द्वारा जीव का निरूपण करते हैं।** देखो! यह चार गति के नारकी का जीव, मनुष्य का जीव, देव का जीव, पशु का जीव। जाति-पंचेन्द्रिय जाति, चउ इन्द्रिय जाति... चार जाति बताते हैं न? ऐसे **भेद द्वारा जीव का निरूपण करते हैं।**

इस तरह अज्ञानी जीवों को ज्ञान उत्पन्न कराने के लिये.... बस! इतना हेतु है। उसके आत्मा का सम्यग्ज्ञान हो, इसके लिये अन्तर गुणभेद करके बताया और

www.vitragvani.com

कर्मजनित पर्याय के भेद करके आत्मा को बताया। बस! इतना हेतु है। **कराने के लिये आचार्य महाराज व्यवहार का उपदेश करते हैं।** यह एक प्रश्न का उत्तर दिया। महाराज! तुम निश्चय को सत्य कहते हो और व्यवहार को झूठ कहते हो तो व्यवहार का उपदेश करने का कारण क्या? — ऐसा शिष्य का प्रश्न था। उसके उत्तर में दो दृष्टान्त देकर सिद्ध किया। स्वस्ति कहते हैं तो स्वस्ति का अर्थ वह म्लेच्छ समझता नहीं तो 'तेरा भला हो, तेरा भला हो' — ऐसा कहा। इसी प्रकार आत्मा अकेले अभेद को समझता नहीं, उसे 'ज्ञान-दर्शन-चारित्र को प्राप्त हो, वह आत्मा' — ऐसा भेद करके बताना — इतना व्यवहार का प्रयोजन है और दूसरा, कर्मजनित पर्यायरहित अकेला आत्मा उसने कभी देखा नहीं, तो कर्मजनित पर्याय का लक्ष्य करके बताया कि यह राग, वह आत्मा, द्वेष (वह) आत्मा। आत्मा, हों! रागवाला आत्मा, द्वेषवाला आत्मा, देव-आत्मा। आत्मा, रागवाला नहीं, द्वेषवाला नहीं — ऐसा समझाना है। समझ में आया? यह क्रूरता नहीं करते? क्रूर आत्मा — ऐसा कहते हैं न? क्रूरता तो विकार है। वह विकार, आत्मा नहीं। पीछे आत्मा है, उसे समझाना है। फिर क्रूरता का लक्ष्य छोड़कर आत्मा का लक्ष्य करने के लिये बताया है। समझ में आया? भाई! माँगीरामजी! अरे...अरे...! ऐसी बातें हैं।

अब, दूसरा बोल। एक बोल का उत्तर कहा। छठवीं गाथा कहने से पूर्व दो प्रश्न उठाये थे। महाराज! आप निश्चय को सत्यार्थ कहते हो, व्यवहार को असत्यार्थ कहते हो तो व्यवहार-असत्यार्थ (को) कहने की जरूरत क्या है? और जो व्यवहार को जानता है, हम व्यवहार कहते हैं, परन्तु उसे ही निश्चय जाने तो वह उपदेश के योग्य नहीं है। एक का उत्तर दिया कि देख भाई! अज्ञानी आत्मा को भेद करके समझाना और संयोगजनित पर्याय से समझाना — इतना व्यवहार का प्रयोजन है। समझाना तो है चैतन्यमूर्ति भगवान। अकेले चैतन्यस्वरूप आत्मा को कभी पहिचाना नहीं तो भेद का लक्ष्य कराकर अभेद में ले जाते हैं — इतना प्रयोजन है।

अब कहते हैं, हम जब उसे व्यवहार से समझाते हैं **केवल व्यवहार... 'एवं अवैति'** परन्तु वह अकेले व्यवहार को ही जानता है। देखो! अब यहाँ लिया; व्यवहार से

www.vitragvani.com

समझाया — ऐसा कहा, परन्तु व्यवहार से हम कहते हैं, परन्तु सुननेवाला व्यवहार को ही निश्चय मान ले कि देखो! तुमने कहा था या नहीं? घी का घड़ा कहा था। घी का घड़ा है या नहीं? घी का घड़ा है ही नहीं। तुमने कहा था या नहीं? गति जीव, यह जीव... परन्तु हमने गति आदि जीव कहा, वह गति से उठाकर जीव की दृष्टि कराने को कहा था; गति में रखने के लिये नहीं कहा था।

केवल व्यवहार... 'एवं अवैति' 'अवैति' अर्थात् श्रद्धा करता है, जानता है। हमारे कहने का आशय तो अभेद निश्चय का है। व्यवहार बताकर, बतलाना है निश्चय; परन्तु सुननेवाला अकेले व्यवहार को ही यथार्थ मान ले, व्यवहार बताया, उसे ही यथार्थ मान ले... गति, वह जीव; जाति, वह जीव; भेद, वह जीव; भेद, वह अखण्ड जीव — ऐसे व्यवहार को ही (निश्चय) मान ले... **केवल व्यवहार...** गाथा में बहुत अलौकिक बात है। व्यवहार कहने का हेतु बतलाया; वह व्यवहार कहने से शिष्य, व्यवहार को पकड़ ले और व्यवहार को छोड़कर निश्चयदृष्टि में न जाए तो ऐसे व्यवहार के माननेवाले को उपदेश लागू नहीं पड़ता; क्योंकि हमें तो निश्चय समझाना है, परन्तु जहाँ व्यवहार आया तो व्यवहार पकड़ लिया कि देखो! आया या नहीं? आया या नहीं? धर्मचन्दजी! गजब बात, भाई! मनुष्य, देव कहा नहीं था? मनुष्य का जीव नहीं कहा था? स्त्री का जीव, पुरुष का जीव, आदमी का जीव, महिला का जीव... परन्तु स्त्री-पुरुष का जीव तो जीव का है; स्त्री-पुरुष का कहाँ जीव है? यह तो तुझे समझाया था, उसे पकड़ लिया। व्यवहार से समझाया और जहाँ व्यवहार सुना और व्यवहार को ही परमार्थ मान लिया, वह सुनने के योग्य नहीं है। हमें निश्चय बताना है तो व्यवहार को ही पकड़ लिया तो निश्चय समझने के योग्य ही नहीं है।

केवल व्यवहार... 'एवं अवैति' 'अवैति' अर्थात् जानता है। **'देशना नास्ति' जो जीव केवल व्यवहार ही का श्रद्धान करता है,....** केवल व्यवहार अर्थात्? व्यवहार का ज्ञान रखे, फिर निश्चय की ओर जाए, वह ठीक है परन्तु **जो जीव केवल व्यवहार ही का श्रद्धान करता है,.... 'अवैति'** का अर्थ यह, श्रद्धान-जानना। **जीव केवल व्यवहार ही का श्रद्धान करता है, उसके लिए उपदेश नहीं है।** देखो! कितने

www.vitragvani.com

न्याय देते हैं। आहाहा! भाई! क्या कहें? व्यवहार असत्यार्थ है – झूठा है। वास्तविक तत्त्व व्यवहार नहीं कहता, परन्तु भेद करके बतलाने में है परन्तु जहाँ वाणी में आया, उसे ही पकड़कर कहे कि तुम भी 'व्यवहार से निश्चय होता है – ऐसा कहते थे।' व्यवहार से निश्चय कहते थे। तो पहले व्यवहार पकड़ लिया। हमारे उपदेश कहने का जो फल होना चाहिए था, वह हुआ नहीं; तू सुनने के योग्य नहीं है। जो व्यवहार को ही मानता है, वह निश्चय सुनने के योग्य नहीं है – ऐसा कहते हैं। समझ में आया? पाठ है, हों! मूल पाठ है, देखो!

अबुधस्य बोधनार्थं मुनीश्वराः देशयन्त्यभूतार्थम्।
व्यवहारमेव केवलमवैति यस्तस्य देशना नास्ति।।६।।

भेद और संयोग से आत्मा को बतलाने के लिये व्यवहार आता है। बतलाने के लिये, हों! उस वस्तु को समझाने के लिये (व्यवहार आता है), परन्तु व्यवहार को ही पकड़ ले (कि) देखो! आया या नहीं? — ऐसे व्यवहार को ही निश्चय मान ले और व्यवहार से निश्चय होता है — ऐसा मान ले तो वह सुनने के योग्य नहीं है। हमारा जो कहने का आशय है, उसे समझने के योग्य नहीं हुआ। हमारे व्यवहार से निश्चय समझाना है, यह आशय था। वहाँ व्यवहार को ही पकड़ लिया तो सुनने के योग्य नहीं है। ना करते हैं, तू सुनने के योग्य नहीं है। समझ में आया? **उसके लिए उपदेश नहीं है।**

भावार्थ : निश्चयनय के श्रद्धान बिना केवल व्यवहारमार्ग में ही प्रवर्तन करनेवाले.... देखो! भगवान आत्मा शुद्ध चैतन्यस्वरूप आत्मा के सम्यग्दर्शन-ज्ञान बिना **केवल व्यवहारमार्ग में ही प्रवर्तन करनेवाले....** अकेले पुण्य — दया, दान, व्रत, विकल्प आदि में प्रवर्तता है, **मिथ्यादृष्टियों के लिये उपदेश देना निष्फल है।** क्योंकि व्यवहार को ही सब मानता है। आहाहा! गाथा बहुत सरस! देखो न! यह चरणानुयोग का अधिकार है। श्रावक का अधिकार कहने से पहले शुरुआत में यह बात उठाई है। श्रावक होने से पहले उसे सम्यग्दर्शन होना चाहिए। सम्यग्दर्शन के बिना श्रावक नहीं हो सकता। वह सम्यग्दर्शन, शुद्ध चैतन्यस्वरूप की अन्तर अनुभवदृष्टि करने से होता है। समझ में आया? व्यवहार का लक्ष्य छोड़कर, चैतन्यस्वरूप में एकाग्र होने से सम्यग्दर्शन

www.vitragvani.com

होता है। ऐसा नहीं मानकर **केवल व्यवहारमार्ग में ही प्रवर्तन करनेवाले मिथ्यादृष्टियों के लिये उपदेश देना निष्फल है।**

आगे केवल व्यवहारनय के श्रद्धान होने का कारण बताते हैं :- क्यों व्यवहार को मान लेता है ? अकेले व्यवहार को क्यों मान लेता है ? हमने जहाँ व्यवहार की बात की, बिल्ली को सिंह बताया, बिल्ली... बिल्ली। सिंह ऐसा होता है, ऐसा क्रूर, ऐसा पंजा होता है, तो बिल्ली को ही सिंह मान लिया। इसी प्रकार व्यवहार से निश्चय बताया तो व्यवहार को ही मान लिया। ऐसा जीव सच्चे उपदेश के योग्य नहीं है। यह गाथा कहेंगे....

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव !)